साकार नेत्रों से निहारे गए ईश्वरीय चरित्र

● ब्रह्माकुमार बृजमोहन, दिल्ली

सन् 1955 में हम परिवार सहित पहली बार बाबा से मिले। हम दिल्ली में रहते थे। सबसे पहले हमारे पिता जी (जगदीश आनन्द जी) ईश्वरीय ज्ञान में आए। जब उन्हें ईश्वरीय ज्ञान की धारणाओं पर चलते 6 मास हो गए, तो उन्हें मधुबन (आबू पर्वत स्थित मुख्यालय) जाने और बाबा से मिलने की अनुमति मिली। मुझे और मेरे छोटे भाई को यह अनुमति नहीं मिली क्योंकि हम दोनों के 6 मास अभी पूरे नहीं हुए थे। हमने बाबा को टेलीग्राम भेजा कि हम बच्चे तो इसी परिवार के सदस्य हैं इसलिए हमें भी साथ आने की अनुमति दी जाए। फिर हमें भी 'विशेष केस' में अनुमति मिली। इस प्रकार, हम चार सदस्यों का परिवार सन् 1955 में बाबा-मम्मा से मिलने मधुबन पहुँचा। उस समय यज्ञ कोटा हाउस में चलता था। आजकल वह राजस्थान सरकार का सर्किट हाउस बना हुआ है। हम बाबा से मिलने के लिए बड़ी उत्सुकता के साथ हिस्ट्री हॉल से भी छोटे हॉल में बैठे थे। मन में जिज्ञासा की लहरें उठ रही थीं कि वह तन कैसा होगा जिसमें भगवान आते हैं।

शरीर का अहसास समाप्त हो गया

थोड़ी देर बाद सामने रखी दो संदलियों पर एक तरफ बाबा और दूसरी तरफ मम्मा आकर बैठे। दोनों में बहुत ही आकर्षण था। मैं एक बार बाबा को और दूसरी बार मम्मा को देखता था। दोनों ही मेरे मन और निगाहों को समान रूप से आकर्षित कर रहे थे। मिलने वाले सभी बच्चों को बारी-बारी मम्मा और बाबा की गोद में जाने का सौभाग्य मिलता था। पहले मेरे माता-पिता ने मम्मा-बाबा की गोद ली। फिर मेरी बारी आई, उस समय ऐसा महसूस हुआ जैसे शरीर है ही नहीं, थोड़ी चेतनता है पर अहसास नहीं है कि शरीर कहाँ है, इतना हल्कापन महसूस हुआ। फिर मम्मा की गोद में गया। वह तो और भी प्यार भरी थी। उसमें बहुत शक्ति थी। गोद में थोड़ा समय रहते थे, समय पूरा होने पर बाबा या मम्मा पीठ पर थपकी देते थे कि तुम्हारा समय पूरा हो गया। मुझे भी मम्मा ने थपकी दी, मैं थोड़ा उठा और फिर दूसरी बार गोद में चला गया। मुझे इतना अच्छा लग रहा था कि अब उठना नहीं है। बहुत ही प्यारा अनुभव था। जीवन में पहली बार ऐसा प्यारा अनुभव हुआ।

लौकिक, अलौकिक दोनों सेवा करो

इसके बाद दूसरे कमरे में जाकर हमारे परिवार को बाबा से मिलना था। मिलते समय मेरे लौकिक पिता जी ने,

जिन्हें ईश्वरीय पढ़ाई और ईश्वरीय सेवा में आगे बढ़ते जाने का बहुत उमंग था, बाबा को कहा, बाबा मैं लौकिक कार्य छोड़कर ईश्वरीय सेवा में लगना चाहता हूँ। बाबा के तन में तो शिवबाबा थे। बापदादा दोनों एक ही तन में थे। बापदादा ने बहुत मुसकराते हुए कहा, तुम्हारा तो परिवार है, तुम्हें निमित्त बनकर परिवार को भी सम्भालना है। लौकिक, अलौकिक दोनों सेवा करो। इसके बाद लौकिक माता जी की बारी आई, बाबा ने कहा, वैसे तो तुम नष्टोमोहा हो लेकिन मैं जगदीश आनन्द बच्चे को (मेरे पिता जी को) कहूँगा कि किसी तीर्थस्थान पर आपको सेवाकेन्द्र खोलकर दे, वहाँ आप रहो। इससे आप और अधिक नष्टोमोहा हो जाएंगी और तीर्थ पर बाबा की सेवा भी हो जाएगी। मथुरा दिल्ली के पास है, पिता जी ने वहाँ सेवाकेन्द्र खोल दिया। माताजी वहाँ अन्तिम घड़ी तक रहीं। हम

उनको कहते थे, अब उम्र बड़ी हो गई है, हमारे पास आ जाओ। कहती थी, बाबा ने मुझे यहीं बिठाया है, यहीं बैठूँगी। किसी भी जिज्ञासु को वे ईश्वरीय ज्ञान इतनी तल्लीनता से सुनाती थी कि शरीर के दुख-दर्द का अहसास ही नहीं होता था। ईश्वरीय शक्ति उनको चलाती रही।

जन्मपत्री जानकर दी राय

मैं उस समय लॉ कालेज में पढ़ता था और चार्टर्ड अकाउंटेंसी की ट्रेनिंग ले रहा था। बाबा ने मुझे कहा, तुम अपनी पढ़ाई पूरी कर लो। मेरे से दो साल छोटा मेरा भाई भी कालेज में पढ़ता था, उसको बाबा ने पढ़ाई छोड़ने के लिए कहा। भले ही बाबा ने सबको अलग-अलग श्रीमत दी पर इसी में कल्याण था। छोटे भाई ने तीन साल बाद शरीर छोड़ दिया। पढ़ाई छोड़कर उसने इन तीन वर्षों में बहुत ईश्वरीय सेवा की। बाबा ने मुझको पढ़ने के लिए कहा, उनको मालूम था कि इसको अभी इस शरीर में रहना है। इस प्रकार बाबा ने हरेक को उसकी जन्मपत्री जानकर राय दी।

घर में खुल गया सेन्टर

बाबा से मिलकर हम अपने लौकिक घर आ गए और हमें समयानुसार बाबा से मार्गदर्शन मिलता रहा। दिल्ली में पहले, हमारे संयुक्त परिवार में सेन्टर खुला। फिर पिताजी ने सेवाकेन्द्र को संयुक्त परिवार से थोड़े अलग स्थान पर कर दिया। यह दिल्ली का दूसरे नम्बर का सेन्टर था। पहले सेन्टर (कमला नगर) पर हमने ज्ञान लिया था, दूसरा सेन्टर हमारे घर में चलने लगा, उसमें दादी प्रकाशमणि एक शिक्षिका के रूप में नियुक्त हुईं, हम साथ ही खाते, रहते थे, जैसे सेन्टर और घर आपस में मिल गए थे। जिन दिनों चार्टर्ड अकाउंटेंट की परीक्षा थी, मैं प्रतिदिन दादी प्रकाशमणि जी से दृष्टि लेकर ही जाता था। उन दिनों यह पढ़ाई काफी मुश्किल होती थी, पहले प्रयास में कोई मुश्किल ही पास होता था पर मेरे परीक्षा परिणाम में मैं सफल हो गया। मैं बहुत खुश हो गया कि बाबा ने ज्ञान, योग की शक्ति से आसानी से पास करा दिया।

क्यों झूठ-सच का धन्धा करते हो?

पास होने के बाद मैंने दिल्ली के सदर बाजार में अपना चार्टर्ड अकाउंटेंट का कार्यालय खोला, प्रैक्टिस शुरू कर दी। इसके आठ मास बाद हम फिर आबू में बाबा से मिले। वैसे तो बाबा कहते हैं, मैं लौकिक बातों में रुचि नहीं लेता पर बाबा ने मुझे बुलाया और पूछा, क्या तुमने इम्तिहान पास कर लिया? मैंने बड़े फ़खुर से कहा, हाँ बाबा, कर लिया, पहले प्रयास में ही कर लिया और दिल्ली के बहुत अच्छे स्थान पर प्रैक्टिस भी शुरू कर दी है। ब्रह्मा बाबा ने कहा, ज़रा नज़दीक आओ। मैं बाबा के और नज़दीक चला गया, क्या बाबा का व्यक्तित्व था, क्या चेहरे की रूहानियत थी, बुजुर्ग तो थे ही, तांबे जैसा दहकता हुआ तपस्वी शरीर था। मुझे बोले, तुमको दो रोटी ही तो खानी हैं ना, तो तुम काहे को यह झूठ-सच का धन्धा करते हो, तुम जाकर कोई सरकारी नौकरी कर लो। मैंने उसी समय फैसला कर लिया कि मैं जाते ही प्रैक्टिस बन्द करके नौकरी शुरू करूँगा। हमारे खानदान में किसी ने नौकरी नहीं की थी। दिल्ली जाकर मैंने अपने भाई से कहा, आफिस के सभी चेअर्स, क्लाइंट की अकाउंट बुक्स वापस कर दो, फर्नीचर सेवाकेन्द्र पर भेज दो, फिर मैंने उस आफिस में कदम नहीं रखा और अखबार में चार्टर्ड अकाउंटेंट की नौकरी की वेकेन्सी (रिक्ति) देखकर हाथ से ही अर्जी लिखकर भेज दी।

आज्ञाकारी को सदा मदद

बाबा की शक्ति कार्य कर रही थी। भाखड़ा नंगल में फर्टिलाईजर (उर्वरक) की नई कंपनी खुल रही थी, अभी ग्राउंड में केवल आफिस बनाया था, उसमें इन्टरव्यू (साक्षात्कार) के लिए मुझे बुला लिया गया। मैं चल पड़ा। ट्रेन में मेरे साथ आठ लड़के और थे, वे भी उसी इन्टरव्यू के लिए

जा रहे थे। कंपनी बड़ी थी, उन्हें आठ-दस चार्टर्ड अकाउंटेंट चाहिएं थे। मैं कोने में दुबककर बैठा हुआ इनकी बातें सुन रहा था। वे सभी मेरे से अधिक स्मार्ट लग रहे थे। मुझे नौकरी मिलने की उम्मीद लग नहीं रही थी। पहुँचने पर मेरा इन्टरव्यू चालू हुआ, मुझसे पाँच-छह सवाल पूछे गए। वे सारे सवाल थे चार्टर्ड अकाउंटेंट की किताबों के जिन्हें मैं भूल चुका था क्योंकि अब तो प्रैक्टिस कर रहा था। मुझे उत्तर आ नहीं रहे थे इसलिए उन्होंने भी गर्दन हिलाकर इशारा दिया कि उत्तर ठीक नहीं हैं। अन्तिम सवाल पूछा, तनख्वाह क्या लेंगे। मैंने कहा, जो आप दे देंगे। इसके बाद मैं चुन लिया गया, बाकी सब नहीं लिए गए। वह सरकारी कंपनी नई-नई थी। उनका नियम था, कम से कम तनख्वाह में रखना है। उन लड़कों ने ज्यादा तनख्वाह मांगी थी। बाबा ने कहा हुआ है कि कोई भी बच्चा किसी विशेष बात में मेरी आज्ञा मान ले तो सारी ज़िन्दगी उसकी मदद करता हूँ, इसका सबूत मैं हूँ। कंपनी ने एक महीने बाद डेढ़ गुणा तनख्वाह बढ़ाकर पुन: विज्ञापन दिया। फिर और लोग आए और मेरी तनख्वाह भी स्वत: डेढ़ गुणा हो गई।

हमारी कंपनी की जब भी कहीं नई शाखा खुलती थी तो वह ज़्यादा तनख्वाह देकर पुराने अनुभवी आफिसर्स को वहाँ भेजने की कोशिश करती थी। जब आसाम में कंपनी की शाखा खुली और मुझे वहाँ जाने की ऑफर आई तो मैंने बाबा से पूछा, बाबा ने कहा, नहीं, बाबा आबू से कहीं जाता है क्या, तुम काहे को जाते हो। इस प्रकार मैं 17 साल नंगल में ही रहा।

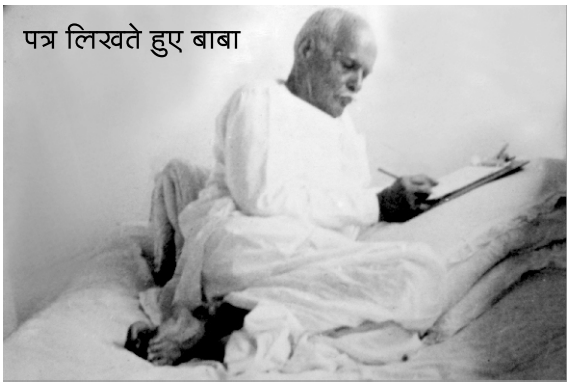
पत्र लिखते हुए बाबा

सतयुग में विमान मिलेगा

एक बार मैंने सोचा, मैं कार खरीद लूँ तो मर्जी अनुसार सेवार्थ आना-जाना कर सकूँगा, समय बच जाएगा। मैंने बाबा से पूछा, बाबा ने हाँ कर दी। मैंने कार खरीद ली। चण्डीगढ़ में प्रदर्शनी आयोजित हुई थी। मैं कार से वहाँ पहुँचा। कार को बाहर पार्क कर अन्दर प्रदर्शनी में गया। हर 15 मिनट बाद मुझे ख्याल आता था, बाहर जाकर कार को देख आऊँ, उस पर कोई बच्चा ख़रोंच तो नहीं डाल रहा। मैंने कहा, यह तो मैं बन्धन में आ गया। भाई-बहनों ने भी दूरी बना ली कि यह तो कार वाला है। उन दिनों की स्थिति ऐसी थी, आज तो कार रखना साधारण बात हो गई है, कार वाले को देखकर सब्जी वाला भी ज्यादा पैसे मांगता था। एक साल रखा, फायदा तो था पर कष्ट भी ज़्यादा था। इसलिए बाबा से पूछा, बाबा, मैं कार बेचना चाहता हूँ। बाबा ने कहा, बेच दो, तुमको सतयुग में विमान मिलेगा।

बाबा ने तनख्वाह वापस भेज दी

भारत में प्रथा है कि पहली तनख्वाह लोग अपने गुरु को भेजते हैं। मैंने भी पहली तनख्वाह का ड्राफ्ट बनाकर रजिस्ट्री करवाकर बाबा को भेज दिया। बाबा ने वह ड्राफ्ट वापस भेज दिया और मुझे कहा, किसके कहने से भेजा? मैंने कहा, मुरली में श्रीमत मिलती है, आप ही कहते हो कि मेरे हाथ में है किसका भाग्य बनाऊँ, किसका ना बनाऊँ। आपकी श्रीमत से ही मैंने नौकरी की है, यह उसी नौकरी की ईमानदारी की कमाई है, तो क्या आप मेरा भाग्य नहीं बनाना चाहते, ऐसे कई मुरली के प्वाइंट्स (ज्ञान बिंदू) मैंने लिखकर भेज दिए। बाबा ने लिखा, बच्चे, पत्र पाया, हर्षाया, इस बारी रख लेता है बाबा,

आगे से नहीं भेजना, अपने आप ही इसे सेवा में लगाओ। मेरी आयु उस समय 21 साल थी। ऐसी कोई धार्मिक संस्था इस दुनिया में नहीं होगी जिसे आप पैसे दें और वह वापिस कर दे। मेरे दिल पर बहुत असर पड़ा कि क्या ऐसी संस्था भी हो सकती है, इससे मुझे बहुत शक्ति मिली।

उन दिनों परिवार के परिवार ज्ञान में चलने वाले थोड़े थे। कुछ सिन्धी परिवार थे बाकी बहुत कम। एक बार बाबा ने हमारे पूरे परिवार को पूना भेजा और कहा, वहाँ सबसे मिलो ताकि कोई यह न समझे कि भगवान केवल सिन्धियों के पास ही आता है। सिन्धियों के अलावा दूसरे परिवार भी ज्ञान में चलते हैं, आपके जाने से उन्हें मालूम पड़ेगा।

बाबा-मम्मा के साथ सैर

मुरली क्लास के बाद चेम्बर में हम सब बच्चे परिवार के तौर पर बाबा के साथ बैठते थे। बाबा हम से बात करते हुए कहते थे कि देखो, शिवबाबा यह कह गया, यह कह गया अर्थात् मुरली पर चर्चा करते थे। फिर मम्मा सीटी बजाती थी, सब इकठ्ठे हो जाते थे। कपड़े के बूट पहनकर भाई और बहनें फिर सैर करने जाते थे बाबा-मम्मा के साथ। बीच-बीच में बाबा खड़े होकर पूछते थे, शिवबाबा याद है? कुछ ईसाई पादरी और नन्स भी घूम रहे होते थे। उन्हें देख बाबा कहते थे, देखो, ये शान्ति में घूमते हैं, एक को याद करते हैं, नन बट वन। हमें बारी-बारी बाबा का हाथ पकड़कर चलने का सुअवसर मिलता था। हाथ पकड़ने में बहुत खुशी होती थी, कोई-कोई मातायें गीत भी गा लेती थी।

ज्ञान की ही बातें करते थे

शाम को चाय पिलाने के लिए बाबा कभी किसी पहाड़ी पर, कभी किसी पहाड़ी पर ले जाते थे और टेढ़े रास्ते से ले जाते थे, फिर कहते थे, शिवबाबा को याद करते-करते आओ, कुछ नहीं होगा। फिर खुली जगह में बैठकर हम चाय पीते थे। बाबा ज्ञान तो देते ही रहते थे, ज्ञान के बिना और कोई बात नहीं करते थे। कई बार बाबा नक्की झील पर ले जाते थे। वहाँ राम मन्दिर के पुजारी को भी बुला लेते थे, पास बिठाते थे, वह बड़ा खुश होता था। कोई भाई-बहन गीत गाते थे, तो कभी बाबा गीत-कविता सुन लेता था, कभी यह भी कहता था, इनमें कोई कमाई नहीं है। बाबा को याद करो, इसमें कमाई है।

सम्पादक भव का वरदान

बाबा त्रिकालदर्शी हैं, उनके मुख से जो बात निकल जाती है, वह पूरी जरूर होती है। चाहे 10 साल बाद पूरी हो या 20 साल बाद। पहली बार बाबा ने जब पत्रिका निकालने के लिए कहा, तो मेरी ड्यूटी लगाई कि पत्रिका को छपवाना है और वरिष्ठ भ्राता जगदीश जी को लेख लिखने हैं। मैं भी कभी-कभी कुछ लिख देता था। पहली पत्रिका तैयार हुई। उसका कागज़ खरीदना, छपवाना, प्रूफ पढ़ना, फोटो बनवाना यह मेरी ड्यूटी थी। मैं चार्टर्ड अकाउंटेंसी भी करता था इसलिए मेरा नाम संपादक या सहसंपादक नहीं लिखा जा सकता था। बाबा दिल्ली में आए और कमला नगर सेन्टर की खुली छत पर बच्चों से मिले। जगदीश जी ने कहा, चलो बाबा को पत्रिका दिखाते हैं। उस वक्त उसका नाम होता था त्रिमूर्ति मासिक, जिसका नाम बाद में ज्ञानामृत पड़ा। जगदीश जी ने बाबा को पत्रिका दिखायी। बाबा ने कहा, यह मेरा संपादक बच्चा है। जगदीश भाई ने मेरी तरफ इशारा किया कि बाबा, इन्होंने छपवाया और बनवाया है। बाबा ने कहा, यह भी मेरा संपादक बच्चा है। बाबा ने कह दिया, मैंने सोचा, मैं संपादक तो हूँ नहीं। फिर सवा साल के लिए जगदीश जी विदेश गये। तब मैंने नौकरी करते-करते पत्रिका अपने स्टेनो से लिखवायी, टाइप करवाई और लगातार सबको भिजवाता रहा। मैंने सोचा, मैं संपादक बन गया, भले ही मेरा नाम संपादक के रूप में नहीं आया। मेरे नौकरी छोड़ने पर बाबा ने प्युरिटी पत्रिका निकलवाई जिसका मैं सम्पादक बना। इस प्रकार बाबा ने अपने वरदान को साकार किया। ❖